भोग से उत्पन्न होती है अतृप्ति

-आचार्य महाप्रज्ञ

लाडनूं, 18 अगस्त 09।

जैन धर्म के मुख्य पर्व पर्युशण पर्व के दुसरे दिन पर अपने सारगर्भित उद्‌बोधन द्वारा श्रद्धालु धर्म-श्रोताओं को संबोधित करते हुए आचार्य महाप्रज्ञ ने कहा कि हम इन्द्रिय जगत में जीत हैं। इन्द्रिय जगत में रहने वाला व्यक्ति इन्द्रियों की अवहेलना कैसे कर सकता है? उसकी मांग को वह कैसे ठुकरा सकता है? उससे विरक्त भी कैसे हो सकता है? इन्द्रियों के अपने नियम होते है। उन नियमों को समझना बहुत जरूरी है। जब तक यह सच्चाई पर हम विचार नहीं करेंगे तब तक इन्द्रिय जगत से कोइ भी व्यक्ति विरक्त नहीं हो सकता है।

प्रस्तुत विचार आचार्यप्रवर ने जैन वि-व भारती स्थित सुधर्मा सभा में दिये। आचार्यश्री ने आगे कहा कि जब हमारी इच्छा किसी वस्तु को प्राप्त करने की होती है, कामनायें उत्पन्न होती है और जब वह वस्तु अप्राप्त रहती है तो भीतर में तनाव होता है। और जब वह मिल जाती है तब अतृप्ति होती है। अतृप्ति अर्थात् तृश्णा, मांग बनी रहती है। अंत में उसको छोड़ना मु-किल हो जाता है। जैसे कोई चीज है उसे कभी नहीं खाया तो अतृप्ति का प्र-न ही नहीं। खाने के बाद यदि उसका स्वाद भा जाए तो उसे छोड़ना कठिन हो जाता है। वैसे ही जब तक काम भोग में लिप्त नहीं रहा तो उसे छोड़ना सरल है और कोई भोग करता ही चला जाए तो वह दुस्त्याज्य बन जाता है, छोड़ना कठिन हो जाता है।

आचार्य प्रवर ने आगे फरमाया कि कभी-कभी हम आभास में चले जाते हैं। सुख तो नहीं है पर वहां सुखाभास मानते हैं। आदमी अपूर्णता में अज्ञानता में मिथ्याभास मानता है, जैसे-एक आदमी कुंऐ के पास गया। रात का समय, उसने देखा कि पानी में चांद गिर गया। वह सोचा कि यदि चांद पानी में डूब जाएगा तो गांव में अंधेरा छा जायेगा। इसलिए वह बाहर एक जगह रस्सी बांधकर और उसके सहारे नीचे उतरने लगा ताकि चांद को डूबने से बचाया जा सके। अकस्मात् रस्सी टूट गई और वह नीचे गिरा। नीचे पानी में पत्थर था उससे लग गई। खड़ा हुआ ऊपर देखा कि चांद ऊपर है। उसने सोचा कोई बात नहीं, मै नीचै गिरा तो क्या हुआ? पर चांद तो ऊपर चला गया। यह है मिथ्याभास। लोग मिथ्याभास में और सुखाभास में ज्यादा जीते हैं। जरूरत है सच्चाई की दुनिया में आने की।

पर्युशण पर्व के अवसर पर मुनि मदन कुमार जी, साध्वी सुभमंगलप्रभा जी ने अपने विचारों की प्रस्तुति दी। साध्वी जिनरेखा जी ने सुमधुर गीत का संगान किया। मंच का संचालन मुनि मोहजीत कुमार जी ने किया।

साधु का द-र्न तीनों काल में मंगल

-युवाचार्य महाश्रमण

लाडनुं, 18 अगस्त 09।

जैन वि-व भारती स्थित सुधर्मा सभा में उपस्थित श्रावक-श्राविकाओं को संबोधित करते हुए युवाचार्य प्रवर ने अपने प्रवचन में कहा कि साधु तो तीर्थ है। उनका द-र्न भी दुर्लभ माना गया है। साधु का द-र्न तीनों काल में दुर्लभ माना गया है। पूर्व में शुभ किया होत है तो ऐसे अवसर प्राप्त होते है। वर्तमान में साधु दर्शन से पुण्य का बंध होता है और भविश्य के लिए :ुभ होता है। भगवान महावीर को नयसार के भव में साधु का द-र्न हुआ। वह जंगल में अपने साथीयों के जा रहा था। साधु मार्गच्युत हो गये थे, रास्ता भूल गए थे। नयसार ने उनको गंतव्य का सही रास्ता बताया और स्वयं के पास जो आहार था, उस :ुद्ध आहार का दान दिया। साधुओं ने नयसार को धर्म का उपदे-ा दिया और प्रथम बार उसे संयम की उपलब्धि हुई।

पर्युशण महापर्व पर युवाचार्यश्री ने भगवान महावीर के पूर्वभव का उल्लेख करते हुए सम्यक्त्व का महत्त्व बताया कि सम्यक्द-र्न होना परम उपलब्धि है। मिथ्यात्व की चिरनिद्रा में सोची हुई नयसार की आत्मा को साधु-द-र्न से प्रथम बार सम्यक्त्व प्राप्त हुआ। जैन द-र्न में सम्यक्त्व को आधार माना गाया है। आचार्य भिक्षु ने मिथ्यात्व की सही करणी को निखद्य ठहराया पर जयाचार्य ने यह स्पश्ट बताया कि जो लाभ सम्यक्त्व की करणी से मिलता है वैसा लाभ मिथ्यात्व की करणी से नहीं सकता है।

युवाचार्य प्रवर ने आगे फरमाया कि नयसार को सम्यक्त्व की प्राप्ति क्यों हुई? क्योंकि वह भव्य था। इस प्रसंग पर मैं भव्य और अभव्य क्यों क्यों है? इसका क्या कारण है? क्या यह कर्म के आधार पर है? अभव्य ने ऐसी क्या गलती की है कि वह भव्य नहीं बन सकता और भव्य ने ऐसा क्या अच्छा किया है वह कभी अभव्य नहीं बन सकता? जैन द-र्न के अनुसार यह पारिणामिक भाव है। यह नियती है। इसमें कर्म कोई कारण नहीं है। यह है जैसा है। यह अनादिकालीन पारिणामिक भाव है, नयसार भव्य था इसलिए उनको सम्यक्त्व की प्राप्ति हुई।